12वीं शताब्दी से पूर्व मध्यकाल तक राजस्थान में शाक्त धर्म की अभिव्यक्ति (अभिलेखों से प्राप्त साक्ष्य के आधार पर)

*डॉ. वीरेन्द्र सिंह चौधरी

हिन्दू धर्म में शक्ति पूजा अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित है। सृष्टि प्रक्रिया में नारी का योगदान स्पष्टः अभूतपूर्व है। शक्ति का प्रारंभिक रूप शिव की पत्नी उमा अथवा पार्वती है जो जगजननी के रूप में प्रसिद्ध है। उनका तांत्रिक और दार्शनिक विकास शक्ति के रूप में हुआ है। शक्ति और शिव की अभिन्नता है। शक्ति के रूप में विकसित होकर पार्वती कपिलावरणा और सिंहवाहिनी दुर्गा बन गयी और कालान्तर में असीम शक्ति संपन्न महाकाली के रूप में उद्भावित हुई। शिव महाकाल थे और उनकी पत्नी महाकाली। शक्ति की उपासना के कारण शक्ति–उपासक शाक्त कहलाये। आगे चलकर शाक्त संप्रदाय देश का एक प्रमुख संप्रदाय बन गया।।

अन्य देवताओं की तरह शक्ति का स्वरूप भी प्रागैतिहासिक काल से ही विशद् रूप धारण करने लगा। उमा, पार्वती, अम्बिका, हेमवती, रूद्राणी, भवानी जैसे नाम आदि शक्ति के रूप में वैदिक साहित्य में प्राप्त हैं। ऋग्वेद के दशम मंडल में एक पूरा सूक्त ही देवी को समर्पित है जिसे देवी सूक्त के नाम से अभिहित किया जाता है।

राजस्थान में भी दुर्गा भगवती की पूजा विस्तृत स्तर पर प्रचलित थी। दुर्गा भवानी, ईश्वरी, चंडिका, अम्बिका, काली, भगवती, कात्यायानी, दधिमाता, नंदा, क्षेमकारी और कौशिकी नाम से वह प्रदेश के विभिन्न भू–भागों में पूजित थी। राजस्थान में देवी के अनेक मंदिर प्राचीन काल से बने थे जिनकी जानकारी या ता शिलालेखों के माध्यम से या फिर साहित्यिक स्रोतों से होती है। कुछ प्राचीन मंदिर कालक्रम से या मुस्लिम आक्रमण के कारण नष्ट हो गये और कुछ आज भी अवस्थित हैं। मध्यकाल में देवी के यहाँ अनेक मंदिरों का विभिन्न भू–भागों में निर्माण हुआ। जिनमें देवी की विविध रूप वाली मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

उपमितभवप्रपचकथा में एक राजकीय दल के वसन्तोत्सव के समय चंडिका के मंदिर की ओर बढ़ने का उल्लेख आता है। वे देवी को वारूणी की भेंट चढ़ाते हैं। और देवी मंदिर के प्रांगण में मद्यपानोत्सव आमोद–प्रमोद में निमग्न हो जाते हैं। समरा इच्छकथा में भी एक चंडिका मंदिर का विशद् वर्णन मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि बाण और हरिभद्र के बीच की शती में भी पूजा संस्कार की भयंकरता में कोई कमी नहीं आई थी। देवी पूजा की यह विधि विशेषकर शबर, भील और भारत के दूसरे आदिवासियों में प्रचलित थी। देवी मंदिर के निकट स्थित वस्त्र खंड, शृंग, खुर, पूंछ, जो भैंस या भेड़े से सम्बन्धित थे लटके रहते थे। तोरण के पार मानव खोपड़ियां की वन्दनमाला लटकी रहती थी। उसके समक्ष दीपक में मानव मांस जलता रहता था। हाथी दांत से निर्मित दीवारों पर त्रिशूल उत्कीर्ण रहता था।

इसी प्रकार वृहत्कथाकोष विन्ध्यवासिनी और चंडकारी की रक्तरंजित पूजा का विवरण प्रस्तुत करता है। नाभिनन्दन जिनोद्धार जेसे परवर्ती ग्रन्थ में भी इस प्रकार की पूजा विधि का उल्लेख मिलता है। उत्तरी भारत में दुर्गापूजा के अनेक शिलालेखीय प्रमाण मिलते हैं। सकराय या शंकरामाता का मंडप स्थानीय गोष्ठिकों ने वि. 749 में बनाया था जिसकी सूचना साकंभरी माता के मंदिर के शिलालेखों से मिलती है। विग्रहराज द्वितीय ने भडौंच में आशापुरी का मंदिर बनवाया था; यह बात 10वीं शती के अंत की है। महिषमर्दिनी की एक प्रतिमा नरहड़ से मिली है जो आठवीं शर्ती की है। दधिमती माता का मंदिर इसके पूर्व काल में स्थित था। वसन्तगढ़ जो शारदा पीठ कहलाता था, से एक अभिलेख मिला है जिसके प्रारंभ में दो श्लोक में क्षेमार्या देवी से प्रार्थना की गयी है। आगे चलकर यह खीमूमाता के नाम से जानी गई। इन्द्रराज

चौहान वटयाक्षिणी देवी का भक्त था। प्रतापगढ़ में उसे महिषमर्दिनी, दुर्गा, कात्यायनी ओर वरदा कहा गया है। मंडौर में अष्टमात्रिका–दूर्गा, शक्ति, ब्राह्मी, कुमारी, वैष्णवी, इंद्राणी, माहेश्वरी, वराही और नरसिंही की मूर्तियां मिली हैं। बघेरे से गणेश जननी के रूप में देवी प्रतिमा प्राप्त हुई है। यह प्रतिमा सिंह वाहिनी है और पुत्र को बाएं हाथ में लिए हुए है। सिंहवाहिनी दुर्गा का उल्लेख चौथी शताब्दी ई. के लेख से प्राप्त होता है। राजस्थान से प्राप्त सिंहों द्वारा खींचे गये रथ पर बैठी दुर्गा का उदाहरण भी प्राप्त है। इसी प्रकार जगत से एक अतीव मनोरम इंद्राणी प्रतिमा और आबानेरी से महिष मर्दिनी की प्रतिमा प्राप्त हुई है।

इसी प्रकार गुहिल शिलादित्य के सामोली अभिलेख जो वि. 793 का है। जेन्तक के समुदाय द्वारा अरण्यवासिनी के मंदिर निर्माण की चर्चा की गयी है। जगत् मेवाड़ में देवी संप्रदाय का केन्द्र था जिसमें देवी के उग्र और घोर स्वरूप की उपस्थिति नहीं मिलती है। पल्लू से प्राप्त सरस्वती प्रतिमा जो अब राष्ट्रीय म्यूजियम की शोभा बढ़ा रही है, अद्वितीय रूप से मनोहर है।

प्रतिहारों का शासन लम्बे समय तक राजस्थान के भू–भागों पर रहा है। ये नरेश धार्मिक मामलों में बड़े उदार थे। नागभट्ट द्वितीय, भोजप्रथम और महेन्द्रपाल प्रथम, भगवती भक्त थे। हरिभद्र ने महाकाली विद्या का उल्लेख किया है। उन्होंने अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी को देवी पूजा का विधान निश्चित किया है।

चित्तौड़ के पास छोटी सादड़ी के भ्रमर माता के मंदिर से प्राप्त व उदयपुर संग्रहालय में संरक्षित संवत् 547 के शिलालेख में तीक्ष्ण त्रिशूल से असुरों का संहार करने वाली दुर्गा अर्द्धनारीश्वर की स्तुति के अतिरिक्त 13–14 पंक्तियों में महाराज गौरीद्वारा शैलेन्द्र के समान ऊँचा दुर्गा भवन निर्माण का उल्लेख किया गया है। यहां प्रासाद शब्द मंदिर का बोधक है।

राजस्थान में गुप्तोत्तर युगीन अनेक प्रतिमाएं मिली हैं जिससे तत्कालीन समय में शिव–शक्ति संप्रदाय के प्रभुत्व का बोध होता है। इस दिशा में तत्कालीन महत्वपूर्ण प्रतिमाओं के केन्द्रों की गणना में जगत् (मेवाड़) तनेसर (मेवाड़) कल्याणपुर (मेवाड़), अमयार (डूंगरपुर) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इस काल की प्रतिमाएं क्षेत्रीय नीले रंग के पारेवा पत्थर से बनी हैं। जिनमें शिव व मातृकावर्गीय संदर्भों का प्राधान्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय आमयार जगत व तनेसर में मातृका भवन रहे होंगे।

जोधपुर डिविजन के नागौर जिले में गोठ मांगलोद नामक स्थान से प्राप्त गुप्त संवत् 289 (608 ई.) के शिलालेख के प्रारंभ में भगवती सरस्वती की स्तुति कर स्थानिय दाधीज ब्राह्मणों की इष्ट देवी दधि माता के निवेश मंदिर का उल्लेख किया गया है। रत्नचंद्र अग्रवाल का उपर्युक्त कथन त्रुटिपूर्ण है। यह शिलालेख 608 ई. जितना पुराना नहीं हो सकता; इसका प्रमुख कारण यह है कि इसमें द्रम्मों में दान देने के अनेक उल्लेख हैं। इन रजत मुद्राओं के प्राचीनतम निर्देश प्रतिहार भोज (ईस्वी 836–885) के अभिलेखों में प्राप्त होते हैं। इसेक पूर्व चांदी के सिक्के धरण, पुराण अथवा रूपक कहलाते थे। दक्षिण भारत में द्रम्म के उल्लेख सर्वप्रथम शिलाहारों के शक वर्ष 763 (ई. 843) के एक अभिलेख में पाये जाते हैं। अतः दधिमतिमाता अभिलेख इतना पुराना नहीं हो सकता।

मंडौर रेल्वे स्टेशन के सामने समूची पर्वत शिला पर गणपति व शिव सहित सप्तमातृका का तक्षण अतीव विलक्षण है। ऐसा प्रतीत होता है कि मंडौर की सातवीं शती की इस बावड़ी की प्रतिष्ठा के साथ ही उपर्युक्त सप्तमात2का आदि प्रतिमाएं एक पक्ति में पहाड़ पर उत्कीर्ण की गयी थी। खंडेला के संवत् 701 (644 ई.) के लेख के अनुसार आदित्यनाग नामक वैश्य द्वारा अर्द्धनारीश्वर मंदिर के निर्माण की बात ज्ञात होती है। रत्नचंद्र अग्रवाल का यह कथन भी आंशिक रूप से त्रुटिपूर्ण है कि लेख की शिला को खंडित है बताना ठीक नहीं है। वह पूरी तरह अखंडित है और खंडेले में आदित्यनाग के वंशजों की हवेली में आज से कई वर्ष पूर्व देखी गयी है। यह लेख भी वि.सं. 701 का न होकर 201 हर्ष संवत् का है जो 807 ई (वि. 864) के बराबर होता है।

खंडेले के निकटस्थ प्रदेश में सकराय माता का प्रसिद्ध मंदिर है। इसके लेख वि. 699 में देवी का नाम शंकरा आता है। इस लेख में गोष्टिको द्वारा देवी का मंडप बनाने का उल्लेख है। रत्नचन्द्र अग्रवाल के अनुसार निज मंदिर में महिष मर्दिनी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। वस्तुतः यह मूर्ति महिषमर्दिनी की न होकर सौम्य स्वरूपवाली देवी शंकरा की है। इसके पास में दूसरी सौम्य रूप वाली ब्राह्मणी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। इस शिलालेख के सम्बन्ध में विद्वानों में काफी मतभेद हैं। भंडारकर ने इसे वि. 897 का ओझा ने 749 वि. का और छाबड़ा ने इसे 699 वि. का बताया है। डा. डी.सी. सरकार ने इसकी तिथि 800 ई. के पास रखने की बात कही थी। सरकार का कथन सभी बातों पर विचार करने के पश्चात् ठीक प्रतीत होता है। यह लेख भी 699 वि. जितना पुराना नहीं है। राजस्थान की प्रतिहार कालीन पूर्वमध्यकालीन कला के क्षेत्र में ओसिया व आबानेरी के प्राचीन देवालय अति महत्वपूर्ण सामग्री उपस्थित करते हैं। यहां सर्वप्रथम पंचायतन पद्धति के मंदिर मिलते है। इनमें हरिहर मंदिर संख्या 1 के प्रवेश द्वार के ददाहिनी ओर वाले लघु देवालय के बाह्य भाग में एक प्रतिमा 12 हाथी वाली देवी की है जिसका सिंह वाहन निकट आसीन है। देवी नृत्य मुद्रा में है, ऊपर के दाहिने हाथ से मांग निकाल रही है तथा नीचे के वाम हस्त द्वार पैर में नुपुर को व्यवस्थित कर रही है। केश विन्यास में गोल दर्पण की विद्यमानता ने प्रतिमा के सौष्ठव में वृद्धि की है। आबानेरी से ही ऐसी भी देवी प्रतिमा प्राप्त हुई थी।

यहाँ का हर्षत माता का मंदिर और बावड़ी कला के सुन्दर प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं। हर्षत माता मंदिर आबानेरी (दौसा जिला) एक भग्न रूप में स्थित मंदिर है। जिसका केवल गर्भगृह अवशिष्ट है। ऊपरी भाग गिर गया है। यह तीन सीढ़ियों दार स्तरों पर स्थित है। मंडप और तोरण द्वार का अधिकांश भाग नष्ट हो गया है। गर्भगृह का प्लान या योजन पंच–रथ शैली का है। इसके तीन ओर प्रदक्षिणापथ है। इसकी दीवार की हर पुष्टि में रथिकाएं निर्मित हैं। वासुदेव विष्णु, पद्युन्न, बलराम–संकर्षण इसकी दक्षिण पश्चिम और उत्तरी ताकों में क्रमशः स्थित हैं। इससे सिद्ध होता है कि मूल मंदिर विष्णु को समर्पित था। आजकल गर्भगृह में चतुर्भुज हर सिद्धि की मूर्ति प्रतिष्ठित है जिसे स्थानीय लोग हर्षत माता कहते है; विभिनन ताकों में धार्मिक एवं लौकिक मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। नृतय, संगीत, उद्यान में क्रीड़ारत लोग तथा प्रेमी की मूर्तियां विविध राथिकाओं में स्थित हैं। अधिष्ठान की रूप–रेखा सरल और स्पष्ट है।

बुचकला जोधपुर से 32 मील की दूरी पर अवस्थित है। यहां ग्राम के बहिर भाग में दो मंदिर बने हुए हैं। इनमें से एक में एक लेख लगा है। पीछे की ताक में बाहर गोधासन गौरी, पार्वती, चतुर्भुज, गणपति व दाहिनी ओर हरिहर प्रतिमा उत्कीर्ण है। इस मंदिर के सामने वाले पार्वती मंदिर में बाहरी ताकों में अन्य देवों के साथ देवी की प्रतिमायें भी है। इसमें 872 वि. का लेख है। जिसके अनुसार यह मंदिर नागभट्ट द्वितीय के शासन काल में बना था।

झालावाड़ में एक देवी मंदिर शीतलेश्वर महादेव मंदिर से थोड़ी दूरी पर स्थित है। यह देवालय 8वीं शती के आसपास का प्रतीत होता है। इसे विष्णु का मंदिर माना गया है पर यह वस्तुतः देवी मंदिर है। मंदिर में मूल नायिका देवी प्रतिमा साढ़े पांच फीट उंची और अष्टभूमि है। इसके अतिरिक्त यहां और भी देवी प्रतिमाएं है जो आदम कद की हैं। लाल पाषाण की बनी हुई इन प्रतिमाओं में चण्डिका का रूप प्रदर्शित है। एक पुरूषाकृति अंकित है। सभा मंडप में भी पार्वती की मूर्ति है।

आमेर में शिला माता का मंदिर राजप्रसाद में जलेबी चौक के दक्षिण–पश्चित कोने में स्थित है। यह श्वेत संगमरमर से निर्मित है। शिलादेवी आमेर राजघराने की कुल देवी के रूप में पूजित थी। इस मूर्ति का राजा मानसिंह पूर्वी बंगाल से लाए थे और 1604 ई. में इसे मंदिर में प्रतिष्ठि किया गया था। इस मंदिर के प्रवेश द्वार पर चांदी के कपाट लगे है जिन पर विद्यादेवियों व नव दुर्गाओं का चित्रण है। इस मंदिर का जगमोहन जिसके मध्य का चतुष्कोण भाग अनावृत है। गर्भगृह मंडप के दक्षिण भाग में निर्मित है। इसमें देवी के कालिका स्वरूप की प्रतिमा श्याम संगमरमर से निर्मित है। गर्भगृह के द्वार पर दोनों और कदली वृक्षों का अंकन है। यह मंदिर स्थापत्य कला का एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है। असीम कुमार राय की मान्यता है कि संभवतः मानसिंह प्रस्तर ही लाए थे और मूर्तियां निर्मित हुई थी। यह उदाहरण अनवरत शाक्त परम्परा के द्योतक हैं।

झालरापाटन के पास गंगाधर नामक स्थान से मालव संवत् 480 का अभिलेख प्राप्त हुआ है जिसमें पयूराक्ष द्वारा 51 मनियों से भरपूर मंदिर के निर्माण का उल्लेख किया गया है।महिष के रूप में असुर का वध करती हुई देवी प्रतिमाएं राजस्थान में नगर, बघेरा तथा रेवाडा से भी प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तियों में देवी की मुद्रा तथा महिष के विविध रूप मिलते हैं। झालरापाटन के नव दुर्गा मंदिर में इस क्षेत्र से प्राप्त देवी मूर्तियों के संग्रह है जो नवीं दसवीं शती से सम्बन्धित हैं। इस प्रकार के शक्ति पीठों में उदयपुर का जगत माता का मंदिर, अनवास का पिप्लाद माता का मंदिर तथा जोधपुर जिले में ओसिया का सचिया माता का मंदिर उल्लेखनीय हैं। जैन धर्मियों ने मातृदेवी की पूजा सच्चिका के नाम से की है। महिषमर्दिनी ने ही जैन सच्चिका का रूप ले लिया। रेवाडा से एक लेख सहित महिष मर्दिनी की मर्ति मिली है। इसका लेख 1237 वि. का है जिसमें मूर्ति का नाम सच्चिका दिया हुआ है।

मेवाड़ में ही उनवास का दुर्गा मंदिर स्थित है। यह पीपला माता के नमा से विख्यात है। यहां शक्ति के एकांतित रूप की ही अर्चना की जाती थी। यहां से एक शिलालेख प्राप्त हुआ है जो वि. 1016 का है। मंदिर की ताकों में चामुण्डा, क्षेमकारी और महिषमर्दिनी की मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

ओसिया ग्राम में पहाड़ी के ऊपर स्थित मंदिर समूह, सचियामाता के नाम से विख्यात है। मुख्य मंदिर पश्चिमोन्मुखी है। यहां गर्भगृह, प्रदक्षिणापथ, सभा मंडप तथा द्वार मंडप है। मंदिर से विक्रम संवत् 1234 का एक अभिलेख मिला है। इससे ज्ञात होता है कि बडांशु परिवार के गया पाल नामक महाजन ने इस मंदिर के जंघा गृह को चण्डिका शीतला, सच्चिका, क्षेमकरी एवं क्षेत्रपाल की प्रतिमाओं से अलंकृत कराया था। इसी मंदिर की पूजा व्यवस्था के लिये पुनः चौहान केलहणदेव के समय पुजारी को घी दिये जाने का उल्लेख भी है।

बांसवाडा क्षेत्र में तलवाड़ा से पांच किलोमीटर की दूरी पर स्थित त्रिपुर सुन्दरी का मंदिर स्थानीय लोगों में तारताई माता के नाम से प्रसिद्ध है। यह पहाड़ी पर बना देवी का प्राचीन मंदिर है। इसका जीर्णोद्धार 16वीं शती में हुआ है। मंदिर के गर्भगृह में देवी की नवीन प्रतिमा प्रतिष्ठित है। यह मूर्ति अपने 18 हाथों में से कुछ में आयुध धारण किए हुए है। इसके प्रभा मंडल में नवदुर्गा की लघु मूर्तियां अंकित हैं। मंदिर में कोई शिलालेख नहीं है।

राजस्थान के राजपूत राजाओं की अपनी कुल देवियां थीं। चौहानों की कूलदेवी आशापुरा तथा बीकानेर के राठौड़ की कुल देवी करणी माता थी। भाटियों की कुल देवी आवड़ माता थी और गौड़ों की पूज्यदेवी कामेही थी। इसी प्रकार सीसोदियों की कुल देवी बरवड एवं राठौड़ों की करनल देवी थी। शाकंभरी भी चौहानों की पूज्यदेवी थी। इनका एक मंदिर सांभर से 20 किलोमीटर दूरी पर एक पहाड़ी पर स्थित है। इस देवी को भी चौहानों की कुल देवी माना गया है। शताब्क्षी शाकंभरी और दुर्गा एक ही देवी के विविध स्वरूप है।

कुल देवियां कैसे बनी और उन्हें जातीय स्वरूप कैसे मिला इसका उत्तर इस संभावना में निहित है। विभिन्न जाति या वंश के प्रवर्त्तक आदि पुरूष होते हैं। इन आदि पुरूषों की विपत्ति के समय सहायता करने के लिए देवी आदि पुरूष के समय से ही कुल में पूजित रही। आगे चलकर उस कुल के वंशजों ने भी उस देवी की पूजा जारी रखी और उसे कुल देवी के पद पर प्रतिष्ठित किया। उदाहरण के लिए जब बीका राज्य प्रस्थान के लिये बीकानेर के भूभाग में युद्धरत था तो करणी माता ने उसकी बड़ी सहायता की थी अतः आगे चलकर बीकावत राठौडों की करणी माता कुल देवी बनी। परवर्ती काल में भी करणी माता इस कुल के शासकों की सहायता विपत्ति में करती रही है। जोरावर सिंह के समय जब बीकानेर के गढ़ को जोधपुर की फौजों ने घेर लिया तो उन्होंने करणी माता से प्रार्थना की।

डाढ़ाली डोकर थई, यातूं गई विदेश।

खून बिना क्यूं खोसजे निज बीकां रो देश।।

करणी माता राठौड़ों की कुलदेवी है। इनका मंदिर देशनोक नामक स्थान पर स्थित है। नेहड़ी गांव से कोई एक कोस पूर्व

में वि. 1746 की वैशाख सुदि द्वितीया शनिवार को श्री करणीजी में देशनोक नामक नगर का शिलान्यास किया। चाकसू का शीतला माता का मंदिर बड़ा प्रसिद्ध है। यह चाकसू से 51 किलोमीटर दूर शीतलामात की डूंगरी पर स्थित है। चाकसू का प्राचीन नाम ताम्बावती या चम्पावती था। चेचक रोग को दूर करने के लिए शीतलमाता की आराधना पूजा करते हैं। इस मंदिर का पूजारी कुम्हार होता है। यहां प्रतिवर्ष चैत्र कृष्णा अष्टमी को एक बडा मेल लगता है जिसमें लोग बड़ी संख्या में एकत्रित होते हैं।

राजस्थान के शेखावाटी भूभाग में देवी पूजा प्राचीन काल से ही प्रचलन में रही है। इस क्षेत्र में देवियों के अनेक मंदिर हैं। इनमें शाकंभरी, जीणमाता, मनसामाता और वराही माता के मंदिर बड़े प्रसिद्ध हैं। शाकंभरी, जिसे शिलालेख में शंकरा नाम दिया गया है का मंदिर उन्नत पहाड़ी पंक्तियों से चारों ओर से घिरी हुई एक घाटी में स्थित है। इस मंदिर में तीन शिलालेख लगे हुए हैं। पहला विवादित शिलालेख वि. 699, वि. 749, वि. 879 का बताया गया है। इसमें गोष्टिकों द्वारा देवी के मंडप निर्माण का उल्लेख है। मंदिर निर्माण की तिथि की निश्चित जानकारी नहीं है।

जीणमाता का मंदिर भी बड़ा प्राचीन है जो सीकर जिले के रैवासा गांव से कुछ दूरी पर पहाड़ की तलहटी में स्थित है। यहां करीब 22 शिलालेख हैं जिनमें से कुछ देवी के सभामण्डप के स्तम्भों पर उत्कीर्ण हैं। सबसे प्राचीन स्तंभ लेख चौहान पृथ्वीराज प्रथम के समय का है। इस मंदिर की निर्माण तिथि ज्ञात नहीं है। अधिकांश लेख मंदिर के जीर्णोद्धार का उल्लेख करते है। वराही मंदिर शाकंभरी मंदिर के मार्ग में एक गिरि शिखर पर अवस्थित है। यह प्राचीन मंदिर है। शाकंभरी में दो और भी शिलालेख हैं जिनमें एक 1055 वि. और दूसरा 1056 वि. का है।

इसी प्रकार प्रतापगढ़ अभिलेख जो वि. 1003 का है उसमें देवी की स्तुति प्रारंभ में निम्नलिखित रूप से की गयी है। महिषासुर राक्षस के भय से भगवान रूद्र की शीघ्रता से भाग जाने पर देवराज इन्द्र के भी स्वर्ग की ओर प्रस्थान कर जाने पर, धनपति कुबेर के भी धन वितरित कर देने पर तथा चन्द्रमा के भी वंशीभूत हो जाने पर, विष्णु की भी बुद्धि के कुंठित हो जाने पर, ब्रह्मा के भी ब्रह्मलोक आश्रित होने पर देवताओं के शत्रु उस महिषासुर को दृष्टिमात्र से ही नष्ट कर देने वाली देवी के नेत्र आपकी रक्षा करें। अनावास के वि. 1016 के शिलालेखों के प्रारंभ मे सरस्वती को नमस्कार किया गया है। इसी प्रकार चच देव के किणसरिया अभिलेख जो वि. 1056 का है में प्रारंभ में कात्यायनी, काली, आदि देवियों की स्तुति की गयी है। ''भगवती कात्यायनी पातुर्व'' पद आया है। परमार राजा पूर्णपाल के भडूंद लेख में अन्य देवों के साथ सरस्वती को भी नमस्कार किया गया है। यह लेख वि. 1102 का है। वि. 998 के अरणा स्तम्भ लेख में भगवती नंदादेवी की वन्दना की गयी है।

राजस्थान में लोक देवियों की बड़ी संख्या में प्रदेश के विभिन्न भागों में पूजा होती रही है। देवी के विकराल रूप के अतिरिक्त भी अन्य रूपों में पूजा की परम्परा दिखाई देती है। वाणीमय देवी, सरस्वती, जाड़याहरा सरस्वती आदि सौम्य रूप में भी प्रचलित थे। जैन धर्म में प्रवेश लेकर महिषमर्दिनी ने भी सौम्य सच्चिका रूप ले लिया था। ये लोक देवियां विविध स्वरूपों वाली होती हैं। इन लोक देवियों का संसार अनूठा है। शास्त्रीय बन्धनों को तोड़कर ये प्रकट होती हैं। विशिष्ट होकर भी ये सव्र सुलभ और सामान्य हैं। इनका कोई विशिष्ठ बंधा बंधाया स्वरूप नहीं होता है, न आयुध न वाहन और न मंत्र–तंत्र होता है। जिस अंचल विशेष में ये प्रकट होती हैं वहां की सामुदायिक संस्कृति की प्रतिबिम्ब स्वरूप होती है। ये देवियां उस अंचल का खानपान, पहनावा, मान्यता विश्वास इनका अपना बन जाता है। जाति, मत, वर्ग से ऊपर उठकर ये देवियां सार्ववर्णिक, सार्वकालिक, सार्वभौमिक और सार्वदेशिक बन जाती है।

***व्याख्याता**

इतिहास विभाग

राजकीय कला महाविद्यालय, दौसा (राज.)

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. ऋग्वेद, 10–125
2. उपमितभवप्रपंचकथा, पृ. 530, 266,355
3. ओझा के अनुसार, शाकंभरी शिलालेख, वि. 749
4. पृथ्वीराजविजय महाकाव्य–पअए पृ. 63–64
5. मरू भारती, अक्टूबर, 1958
6. एपिग्राफिया इंडिका, भाग– पगए पृ. 187
7. वटयाक्षिणी का उल्लेख स्कंद पुराण कुमार खंड, पृ. 40–50 में मिलता है। इसका निवास बड़ के पेड पर था।
8. एपिग्राफिया इंडिका, भाग– गपअए पृ. 187
9. रिसर्चर, 1, पृ.1, 24
10. रिसर्चर भाग–18, पृ. 7–14
11. रिसर्चन–1, पृ. 43
12. एपिग्राफिया इंडिका, भाग–39ए पृ. 191
13. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ. 35
14. एपिग्राफिया इंडिका, भाग–पृ. 159
15. समराइच्चकथा, पृ. 457
16. भ्रमर माता शिलालेख, एपिग्राफिया इंडिका, भाग–30, पृ. 122
17. सुजस संचय, पृ. 796–797
18. श्रीमाली, गोविन्दलाल, राजस्थान के अभिलेख, पृ. 171
19. सुजस संचय, पृ. 796–797
20. सुजस संचय, रतनचन्द्र अग्रवाल का लेख, पृ. 797
21. एपिग्राफिया इंडिका, भाग–4
22. एपिग्राफिया इंडिका, भाग–1, खंड 27
23. राजस्थान के अभिलेख शेखावाटी प्रदेश, मिश्र रतनलाल, पृ. 11
24. तिवारी दुर्गानन्दन, ओसियां के मंदिरों की देवी मूर्तियां, पृ. 18–21
25. एपिग्राफिया इंडिका, खंड 9, पृ. 198–200
26. सुजस संचय, रमेशवारिद् का लेख, पृ. 801
27. हिस्ट्री आफ जयपुर सिटी, असीम कुमार राय, पृ. 51–52
28. फ्लीट, गुप्त इंसक्रिपशंस, पृ. 74–76
29. तिवारी, दुर्गानन्द, पृ. 18–21
30. सुजस संचय, आर.सी. अग्रवाल का लेख, पृ. 804
31. मिश्र, रतनलाल, मेवाड़ इंसक्रिप्शिंस, पृ. 55

32. श्रीमाली, गोविन्दलाल, पृ. 174
33. तिवाड़ी दुर्गानन्दन, पृ. 28–35
34. आवड़ तूठी भाटियां, कामेड़ी गौडाह। श्री बरवड़ सीसौदिया, करनल राठौडाह।
35. सं. डॉ. पेमाराम, राजस्थान में धर्म सम्प्रदाय एवं आस्थाएं, जैन, अनिता, सांभर नगरी का आस्था केन्द्र–शाकंभरी मंदिर, पृ. 64 और आगे
36. श्री करणीमाता मंदिर, देशनोक की बहियों
37. डॉ0 पेमाराम राजस्थान में धर्म सम्प्रदाय व आस्थाएं, पृ. 139
38. एपिग्राफिया इंडिका, खंड–27, भाग –1, पृ. 232
39. एपिग्राफिया इंडिका, भाग– ग्प्, पृ. 11,19,
40. एपिग्राफिया इंडिका, भाग– ग्प्ट, पृ. 182–188
41. सं. गहलोत सुखवीर सिंह, राजस्थान के प्रमुख अभिलेख, पृ. 190–191
42. सं. गहलोत सुखवीर सिंह, राजस्थान के प्रमुख अभिलेख, पृ. 239
43. उपरोक्त, राजस्थान के प्रमुख अभिलेख, वि. 870 का चाकसू लेख, पृ. 60,
44. उपरोक्त, राजस्थान के प्रमुख अभिलेख, वि. 1200 का सांभर लेख, पृ. 227